Provided by- Dr Abhishek Mishra
BA-2nd Year 4th Sem
Bhasha Vigyan(Dept of Hindi)

वाक्य विज्ञान का स्वरूप, परिभाषा, एवं प्रकार

वाक्य भाषा का सबसे महत्वपूर्ण अंग है। मनुष्य अपने विचारों की अभिव्यक्ति वाक्यों के माध्यम से ही करता है। अत: वाक्य भाषा की लघुतम पूर्ण इकाई है।

वाक्य विज्ञान का स्वरूप

वाक्य विज्ञान के अन्तर्गत निम्नलिखित बातों का विचार किया जाता है- वाक्य की परिभाषा, वाक्यों और भाषा के अन्य अग् का सम्बन्ध, वाक्यों के प्रकार, वाक्यों में परिवर्तन, वाक्यों में पदों का क्रम, वाक्यों में परिवर्तन के कारण आदि। वाक्य विज्ञान के स्वरूप के विषय में डा. कपिलदेव द्विवेदी ने विस्तार से विवेचन किया है। उनका मत इस प्रकार है:- वाक्य-विज्ञान में भाषा में प्रयुक्त विभिé पदों के परस्पर संबन्ध का विचार किया जाता है। अतएव वाक्य-विज्ञान में इन सभी विषयों का समावेश हो जाता है- वाक्य का स्वरूप, वाक्य की परिभाषा, वाक्य की रचना, वाक्य के अनिवार्य तत्व, वाक्य में पदों का विन्यास, वाक्यों के प्रकार, वाक्य का विभाजन, वाक्य में निकटस्थ अवयव, वाक्य में परिवर्तन, परिवर्तन की दिशाएँ, परिवर्तन के कारण, पदिम (Taxeme) आदि। इस प्रकार वाक्य-विज्ञान में वाक्य से संबद्ध सभी तत्वों का विवेचन किया जाता है।

पद-विज्ञान और वाक्य-विज्ञान में अन्तर यह है कि पद-विज्ञान में पदों की रचना का विवेचन होता है। अत: उसमें पद विभाजन (संज्ञा, क्रिया, विशेषण आदि), कारक, विभक्ति, वचन, लिंग, काल, पुरुष आदि के बोधक शब्द किस प्रकार बनते हैं, इस पर विचार किया जाता है। वाक्य-विज्ञान उससे अगली कोटि है। इसमें पूर्वोक्त विधि से बने हुए पदों का कहाँ, किस प्रकार से रखने से अर्थ में क्या अन्तर होता है, आदि विषयों का विवेचन है। ध्वनि निर्मापक तत्व हैं। जैसे मिट्टी, कपास आदि; पद बने हुए वे तत्व हैं, जिनका उपयोग किया जा सकता है, जैसे- ईंट, वस्त्र आदि; वाक्य वह रूप है, जो वास्तविक रूप में प्रयोग में आता है, जैसे- मकान, सिले वस्त्र आदि। पद ईंट है तो वाक्य मकान या भवन।

ताि्त्वक दृष्टि से ध्वनि, पद और वाक्य में मौलिक अन्तर है। ध्वनि मूलत: उच्चारण से संबद्ध है। या शारीरिक व्यापार से उत्पé होती है, अत: ध्वनि में मुख्यतया शारीरिक व्यापार प्रधान है। पद में ध्वनि और सार्थकता दोनों का समन्वय है। ध्वनि शारीरिक पक्ष है और सार्थकता मानसिक पक्ष है। पद में शारीरिक और मानसिक दोनों तत्वों के समन्वय से वह वाक्य में प्रयोग के योग्य बन जाता है। सार्थकता का संबन्ध विचार से है। विचार मन का कार्य है, अत: पद में मानसिक व्यापार भी है। वाक्य में विचार, विचारों का समन्वय, सार्थक एवं समन्वित रूप में अभिव्यक्ति, ये सभी कार्य विचार और चिन्तन से संबद्ध है, अत: मानसिक कार्य है। वाक्य में मानसिक अथवा मनोवैज्ञानिक पक्ष मुख्य होता है। विचारों की पूर्ण अभिव्यक्ति वाक्य से होती है, अत: वाक्य ही भाषा का सूक्ष्मतम सार्थक इकाई माना जाता है। इनका भेद इस प्रकार भी प्रकट किया जा सकता है-

1. **ध्वनि:** उच्चारण से संबद्ध है, शारीरिक तत्त्व मुख्य है, प्राकृतिक तत्त्व की प्रधानता के कारण प्रकृति के तुल्य 'सत्' है।
2. **पद:** इसमें शारीरिक और मानसिक दोनों तत्त्व हैं, सत् के साथ चित् भी है, अत: 'सच्चित्' रूप है।
3. **वाक्य:** मानसिक पक्ष की पूर्ण प्रधानता के कारण भाषा का अभिव्यक्त रूप है, अत: 'आनन्द' रूप या 'सच्चिदानन्द' रूप है। वाक्य ही सार्थकता के कारण रसरूप या आनन्दरूप होता है। भावानुभूति, रसानुभूति या आनन्दानुभूति का साधन वाक्य ही है। वाक्य सत्, चित्, आनन्द का समन्वित रूप है, अत: दार्शनिक भाषा में इसे 'सच्चिदानन्द' कह सकते हैं।

वाक्य की परिभाषा

प्राचीन मत

भारत के प्राचीन वैयाकरणों और भाषा शास्त्रियों ने वाक्य के विषय में सूक्ष्मता से विचार किया है। डा. कपिलदेव द्विवेदी ने इन मतों को सार रूप में प्रस्तुत किया है और इन मतों की समीक्षा भी की है जो इस प्रकार है:
पतंजलि ने महाभाष्य में वाक्य के 5 लक्षण दिए हैं-

1. एक क्रियापद वाक्य है।
2. अव्यय, कारक और विशेषण से युक्त क्रिया-पद वाक्य है।
3. क्रिया-विशेषण-युक्त क्रिया-पद वाक्य है।
4. विशेषण-युक्त क्रिया-पद वाक्य है।
5. क्रियापद-रहित संज्ञा-पद भी वाक्य होता है। जैसे- तर्पणम् (तर्पण करो), पिण्डीम् (ग्रास खाओ)।

मीमांसकों, नैयायिकों और साहित्यशास्त्रियों ने साकांक्ष पद-समूह को 'वाक्य' माना है। आचार्य विश्वनाथ ने 'अकांक्षा, योग्यता और आसत्ति से युक्त पद-समूह को वाक्य माना है।

आचार्य 'भर्तहरि' ने अपने पूर्ववर्ती वैयाकरणों और दार्शनिकों के मतों का संग्रह 'वाक्यपदीय' में करते हुए वाक्य की निम्नलिखित परिभाषाएं दी हैं।

1. क्रिया-पद को वाक्य कहते हैं।
2. क्रिया-युक्त कारकादि के समूह को वाक्य कहते हैं।
3. क्रिया एवं कारकादि-समूह में रहनेवाली 'जाति' वाक्य है।
4. क्रियादि-समूह-गत एक अखण्ड शब्द (स्फोट) वाक्य है।
5. क्रियादि-पदों के क्रम-विशेष को वाक्य कहते हैं।
6. क्रियादि के बुद्धिगत समन्वय को वाक्य कहते हैं।
7. साकांक्ष प्रथम पद को वाक्य कहते हैं।
8. साकांक्ष पृथक्-पृथक् सभी पदों को वाक्य कहते हैं ।

पतंजलि और थ्रॉक्स

ईसा से पूर्व भाषाशास्त्रीय तत्त्व-चिन्तकों में भारत में पतंजलि' (150 ई. पू. के लगभग) और यूरोप में 'डायोनिसियस थ्रॉक्स' (प्रथम शताब्दी ई. पू.) का नाम उल्लेखनीय है। दोनों ही आचार्यों ने वाक्य की परिभाषा इस प्रकार दी है- 'पूर्ण अर्थ की प्रतीति कराने वाले वाले शब्द-समूह को वाक्य कहते हैं।'

इसमें दो बातों पर विशेष बल दिया गया है:-

1. वाक्य शब्दों का समूह है।
2. वाक्य पूर्ण अर्थ की प्रतीति कराता है।
3. भाषा की इकाई वाक्य है, न कि शब्दसमूह या पद।
4. यह आवश्यक नहीं है कि वाक्य शब्दों का समूह ही हो। एक पद वाले भी वाक्य प्रयोग में आते हैं। 'चलोगे ?' 'हाँ', 'कहाँ से?' 'घर से', 'कुतः' 'नद्याः' आदि।
5. अनेक भाषाओं में एक समस्त पद ही पूरे वाक्य का काम देता है।
6. वाक्य भाषा का अंग है, वह सम्पूर्ण अर्थ की प्रतीति नहीं करा सकता। एक ग्रन्थ या भाषण में सहस्रों वाक्य होते हैं, तब पूर्ण की अभिव्यक्ति होती है। एक-एक वाक्य विचार-धारा की एक-एक तरंग मात्रा है।

डा. कर्ण सिंह ने भी प्राचीन मतों के आधार पर वाक्य की तात्विक परिभाषा दी है जो इस प्रकार है-

वाक्य की तात्त्विक परिभाषा

वाक्य की तात्त्विक परिभाषा अत्यधिक विवादस्पद विषय है। भारत के प्राचीन वैयाकरणों, नैयायिकों, मीमांसकों तथा साहित्यकारों का इस विषय में पर्याप्त मतभेद है। प्राचीन वैयाकरण 'पतंजलि'- **"कारक, अव्यय, विशेषण, क्रियाविशेषण तथा क्रिया के एक साथ प्रयोग" को या "मात्रा क्रिया पद के प्रयोग" को या "कभी-कभी क्रियापदरहित एकमात्रा 'तर्पणम्' या 'पिण्डीम्' - जैसे "संज्ञापद" को भी वाक्य मानते हैं; क्योंकि यह भी 'तर्पण करो' या 'ग्रास खाओ' जैसे पूर्ण अर्थ का द्योतक है।'**

न्यायभाष्यकार वात्सययान, आचार्य जगदीश तथा आचार्य विश्वनाथ अपनी-अपनी शब्दावली में 'साकांक्ष पदसमूह' को ही वाक्य मानते हैं। 'भतृ हरि' ने अपने ग्रन्थ 'वाक्यपदीय' में अपने पूर्ववर्ती न्यायवादी आचार्यों के मतों को संकलित करते हुए उनके द्वारा मान्य वाक्य की आठ परिभाषाएँ दी हैं-

1. क्रियापद को वाक्य कहते हैं।
2. क्रियापद-सहित कारकादि के समूह को वाक्य कहते हैं।
3. क्रिया तथा कारकादि-समूह में रहने वाली 'जाति' को वाक्य कहते हैं।
4. क्रियादि समूहरूप एक अखण्ड शब्द (स्फोट) को वाक्य कहते हैं।
5. क्रियादि पदों के विशेष क्रम को वाक्य कहते हैं।
6. क्रियादि के बुद्धिगत अखण्ड समन्वय को वाक्य कहते हैं।
7. आकांक्षायुक्त प्रथम पद को ही वाक्य कहते हैं।
8. आकांक्षायुक्त पृथक्-पृथक् सभी पदों को वाक्य कहते हैं ।

वस्तुत: जैसा पूर्व भी संकेत किया गया है, वाक्य की तात्त्विक परिभाषा करना बहुत ही कठिन है। यह विषय पूर्णतया दार्शनिक है। अत: निदर्शनमात्रा लिए ही उपर्युक्त मतों का उल्लेख किया गया है। 'भाषाविज्ञान' के प्रारम्भिक पाठकों क लिए इस विषय को, संक्षिप्त तथा सरल शैली में ही, आगे प्रस्तुत किया जा रहा है।

भारत के प्राचीन आचार्यों में से 'पत×जलि' (150 ई. पू.) को, तथा पाश्चात्य आचार्यों में से 'डियोनिसियस थ्रॉक्स' (प्रथम शताब्दी ई. पू.) को इस विषय में प्रामाणिक मानते हुए वाक्य की परिभाषा इस प्रकार की जा सकती हैं-

पूर्ण अर्थ की प्रतीति कराने वाला शब्द-समूह वाक्य है।

किन्तु, वाक्य की यह परिभाषा भी विवाद से परे नहीं है। इस परिभाषा के अनुसार वाक्य की दो विशेषताएँ हैं-

1. "वाक्य, शब्दों का समूह" है। तथा,
2. "वाक्य, पूर्ण अर्थ की प्रतीति कराता है।"

विचार करने पर वाक्य की इन दोनों ही विशेषताओं का खण्डन हो जाता हे। वस्तुत: न तो "वाक्य, शब्दों का समूह" ही है और न ही "वाक्य, पूर्ण अर्थ की प्रतीति कराता है"। इन दोनों विषयों पर यहाँ पृथक्-पृथक् विचार करना आवश्यक है।

(क) वाक्य, शब्दों का समूह है

'भाषा' के प्रसंग में यह कहा जा चुका है, कि भाषा का उद्देश्य भावों या विचारों की अभिव्यक्ति है। विचार या भाव का ही बाह्य रूप वाक्य है। इस दृष्टि से वाक्य ही भाषा की इकाई है, जिसे पदों या खण्डों में विभाजित किया जा सकता है। वाक्य का पदों में विश्लेषण या विभाजन तो कृत्रिम है, जो वैयाकरणों ने अपनी सुविधा के लिए किया है। वस्तुत:, हमारा विचारना-बोलना आदि सब वाक्य में ही होता है। हाँ, बोलचाल में हम अपने भाग या विचार को व्यक्त करने के लिए आवश्यकतानुसार कभी तो अनेक पदों का प्रयोग करते हैं और कभी केवल एक ही पद का; उदाहरण के लिए-

1. "मुझे पानी पिलाइए।" (अनेक पद)
2. "पानी।" (एक पद)

प्रकरण के अनुसार, उपर्युक्त दोनों ही प्रकार के वाक्य हमारे भाव या विचार को प्रकट कर देते हैं। यदि शब्दों का समूह ही वाक्य" हो, तो एक पद वाले वाक्य से काम नहीं चलना चाहिए। इसके विपरीत, संवादों में प्राय: एक पद वाले वाक्यों से ही भाव को व्यक्त किया जाता है। "हाँ", "नहीं।", "आओ।", "जाओ।" "कल।", "परसो।" "दिल्ली।" "घर।" आदि ऐसे अनेक वाक्यों का प्रयोग हम अपने प्रतिदिन के उत्तर-प्रत्युत्तर आदि में करते हैं।

वैयाकरण पत×जलि ने भी "तर्पणम्।", "पिण्डीम्।", "प्रविश।" इत्यादि एक पद वाले वाक्यों का अस्तित्व स्वीकार किया है।

इस प्रकार इस मान्यता का खण्डन हो जाता है कि "पदों का समूह वाक्य होता है।"

(ख) वाक्य, पूर्ण अर्थ की प्रतीति कराता है

विचार करने पर वाक्य इस कसौटी पर भी खरा नहीं उतरता है। वस्तुत: जिस विचार या भाव को व्यक्त करने के लिए 'वाक्य' का प्रयोग किया जाना है, वह विचार, केवल एक वाक्यमात्रा नहीं होता है। भाषा-व्यवहार में, जब कोई वक्ता अपना कोई विशेष विचार व्यक्त करता है, तो वह उसके लिये एक ही नहीं, अपितु अनेक वाक्यों का प्रयोग करता है। प्राय: किसी निबंध, प्रबन्ध या लिखित रचना का मूल विचार तो एक ही होता है, किन्तु उसके लिए अनेक वाक्यों का ही नहीं, अपितु अनेक अनुच्छेदों, अध्यायों तथा खण्डों तक का प्रयोग होता है, फिर भी ताि◌त्त्वक दृष्टि से विचार की पूर्ण अभिव्यक्ति असम्भव ही है।

सामान्यतया भी, जब कोई वक्ता बोलचाल में, किसी वाक्य का प्रयोग करता है, तो उसका विचार केवल एक वाक्य तक सीमित नहीं होता है। उसके साथ अन्य अनेक विचार भी सम्बद्ध होते हैं, जिन्हें व्यक्त करना उस समय न तो सम्भव ही होता है और न ही आवश्यक। वस्तुत:, विचार और वाक्य का सम्बन्ध, वक्ता-व्यक्ति के स्वभाव, उसकी कथन-शैली और परिस्थितियों पर निर्भर करता है।

इतना ही नहीं, दार्शनिक दृष्टि से विचार, 'ब्रह्म' के समान ही अखण्डनीय है। यही कारण है कि प्राचीन भारतीय विचारकों ने 'शब्दब्रह्म' की कल्पना की है। इस प्रकार "वाक्य द्वारा पूर्ण अर्थ की प्रतीति" का भी खण्डन हो जाता है।" वाक्य की ऊपर दी गई परिभाषा यद्यपि बहुत सूक्ष्म और तात्त्विक है। परन्तु दार्शनिक होने के करण सामान्य विद्यार्थियों के लिए कठिन है। अत: विद्वानों ने वाक्य की व्यावहारिक परिभाषा भी दी है:

वाक्य की व्यावहारिक परिभाषा

इस विषय में डा. भोलानाथ तिवारी का मत इस प्रकार है-

वाक्य को प्राय: लोग सार्थक शब्दों का समूह मानते हैं, जो भाव को व्यक्त करने की दृष्टि से अपने आप पूर्ण हों। कोषों तथा व्याकरणों में भी वाक्य की इसी प्रकार की परिभाषा मिलती है। यूरोप में इस दृष्टि से प्रथम प्रयास थ्राक्स (1 ली सदी ई. पू.) का है। भारत में पतंजलि1 (150 ई. पू. के लगभग) का नाम लिया जा सकता है। ये दोनों ही आचार्य 'पूर्ण अर्थ की प्रतीति कराने वाले शब्द-समूह को वाक्य मानते हैं। यों समझने समझाने के लिए परिभाषाएँ ठीक हैं, किन्तु तत्त्वत: इन्हें ठीक नहीं कहा जा सकता। थोडा ध्यान दें तो यह स्पष्ट हुए बिना नहीं रहेगा कि भाषा में या बोलने में वाक्य ही प्रधान है। वाक्य भाषा की इकाई है। व्याकरणवेत्ताओं ने कृत्रिम रूप से वाक्य को तोडकर शब्दों को अलग-अलग कर लिया है। हमारा सोचना, बोलना या किसी भाव को हृदयंगम करना सब कुछ 'वाक्य' में ही होता है। ऐसी स्थिति में 'वाक्य शब्दों का समूह है' कहने की अपेक्षा 'शब्द वाक्यों के कृत्रिम खंड है' कहना अधिक समीचीन है।

ऊपर वाक्य की जो परिभाषाएँ दी गई हैं उनमें मूलत: दो बातें हैं-

1. वाक्य शब्दों का समूह है।
2. वाक्य पूर्ण होता है।

'वाक्य शब्दों का समूह है' पर एक दृष्टि से ऊपर विचार किया जा चुका है, और कहा जा चुका है कि वाक्य का शब्द रूप में विभाजन स्वाभाविक नहीं हैं आज भी घर में ऐसी भाषाएँ हैं जिनमें वाक्य का शब्द रूप में कृत्रिम

विभाजन नहीं हुआ है। ऐसी भाषाओं में वाक्य ही वाक्य हैं, शब्द नहीं।

'वाक्य शब्दों का समूह है' इस पर एक और दृष्टि से भी विचार किया जा सकता है। 'वाक्य शब्दों का समूह है' का अर्थ है कि वाक्य एक से अधिक शब्दों का होता है, पर यह बात भी पूर्णत: ठीक नहीं है। एक शब्द के भी वाक्य होते हैं। छोटा बच्चा प्रात: जब माँ से 'बिछकुट' (विस्कुट) कहता है तो इस एक शब्द के वाक्य से ही वह अपना पूरा भाव व्यक्त कर लेता है। बातचीत में भी प्राय: वाक्य एक शब्द के होते हैं। उदाहरणस्वरूप:

हीरा- तुम घर कब आओगे?

मोती- कल। और तुम?

हीरा- परसों।

मोती- और मोहन गया क्या?

हीरा- हां।

'खाओ', 'जाओ', 'लिखिए', 'पढिये' तथा 'चलिए' आदि भी एक ही शब्द के वाक्य हैं।

वाक्य की पूर्णता भी कम विवादास्पद नहीं है। उसे पूर्णत: पूर्ण नहीं कहा जा सकता। कुछ उदाहरण लिये जा सकते हैं। प्राय: अपने किसी भाव को हम कई वाक्यों द्वारा व्यक्त करते हैं। यहाँ वह भाव अपने में पूर्ण है और कई वाक्य मिलकर उसे व्यक्त करते हैं, अतएव निश्चय ही ये वाक्य पूर्ण (पूरे भाव) के खंड मात्रा हैं, अत: अपूर्ण हैं। यह विवाद यहीं समाप्त नहीं हो जाता। मनोविज्ञानवेत्ता उस भाव या एक पूरी बात (जिसमें बहुत से वाक्य होते हैं) को भी अपूर्ण मानता है, क्योंकि जन्म से लेकर मृत्यु तक उसके अनुसार भाव की एक ही अविच्छिé धारा प्रवाहित होती रहती है ओर बीच में आने वाले छोटे मोटे सारे भाव या बातें उस धारा की लहरें मात्रा हैं अतएव वह अविच्छिé धारा ही केवल पूर्ण है। कहने की आवश्यकता नहीं कि उस अविच्छिé घारा की पूर्णता की तुलना में एक भाव या विचार भी बहुत ही अपूर्ण है तो फिर एक वाक्य की पूर्णता का तो कहना ही क्या जो पूरे भाव या विचार का एक छोटा खंड मात्रा है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि 'वाक्य' की प्रचलित परिभाषा बहुत ही अपूर्ण तथा अशुद्ध है।

ऊपर वाक्य के सम्बन्ध में दिये गये विवाद की पृष्ठभूमि में कहा जा सकता है कि- वह अर्थवान ध्वनि-समुदाय जो पूरी बात या भाव की तुलना में अपूर्ण होने पर भी अपने आप में पूर्ण हो तथा जिसमें प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से क्रिया का भाव हो वाक्य है।

यदि बहुत संक्षेप में कहना चाहें तो वाक्य को 'लघुतम पूर्ण कथन या भाव' भी कह सकते हैं। स्पष्ट ही ये परिभाषाऐं भी हर दृष्टि से पूर्ण वैज्ञानिक नहीं है, किन्तु किसी अधिक समीचीन परिभाषा के अभाव में काम दे सकती हैं।

डा. कपिलदेव द्विवेदी ने वाक्य की व्यावहारिक परिभाषा इस प्रकार दी है- "भाषा की तघुतम पूर्ण सार्थक इकाई को वाक्य कहते हैं।"

अर्थात् 'पूर्ण अर्थ की बोधक सार्थक लघुतम इकाई को वाक्य कहते हैं। यह भाषण या विचारों का एक अंग होता है।' कोई भी वाक्य तात्त्विक रूप से पूर्ण अर्थ का बोध नहीं कराता है। वह विचार-धारा का एक अंश होता है। पूरा भाषण या पूरा ग्रन्थ ही पूर्ण अर्थ का बोधक होता है। उसे हम 'महावाक्य' कह सकते हैं। वाक्य उसका अंग होगा। पतंजलि ने वाक्य की सत्ता के साथ ही 'महावाक्य' की सत्ता भी मानी है और वाक्य को अंग माना है।

सा चावश्यं वाक्यसंज्ञा वक्तव्या, समानवाक्याधिकारश्च।

डा. कर्णसिंह ने वाक्य की व्यावहारिक परिभाषा इस प्रकार दी है- "तात्कालिक विचराभिव्यक्ति के लिए वाक्य भाषा का चरम अवयव है। या व्यावहारिक दृष्टि से वाक्य भाषा का चरम अवयव है।

वाक्य की इस परिभाषा के अनुसार, हम वाक्य को ठीक वैसा ही मान सकते हैं, जैसे मानते हुए हम उसका व्यवहार भाषा में करते हैं। अत: वाक्य में अनेक शब्द भी हो सकते हें तथा वाक्य केवल एक शब्द का भी हो सकता है; उदाहरणार्थ-

1. "तुम कहाँ जा रहे हो?"- (अनेक शब्द या शब्द-समूह)
2. "गाँव।"- (एक शब्द)

अभिप्राय को व्यक्त करने के दृष्टि से (i) तथा (ii) दोनों ही वाक्य हैं।"

पद और वाक्य में सम्बन्ध

प्राय: सभी विद्वान् यह मानते हैं कि वाक्य एक अखण्ड इकाई है। वाक्य का पदों में विभाजन वाक्यार्थ को समझने के लिए एक कल्पित प्रक्रिया है। परन्तु यह भी निर्विवाद सत्य है कि वाक्य में पदों की सत्ता को नकारा नहीं जा सकता। यद्यपि वाक्य में पद का कोई स्वतंत्रा अर्थ नहीं है क्योंकि पद वाक्यार्थ का बोध कराने में सहायक होते हैं और वाक्यार्थ का बोध कराकर पद गौण हो जाते हैं, परन्तु पदों के बिना भी वाक्य का कोई अस्तित्व नहीं हो सकता। जिस प्रकार बिना अवयवों के शरीर का अस्तित्व नहीं हो सकता, उसी प्रकार बिना पदों के वाक्य का कोई अस्तित्व नहीं हो सकता। पद किस प्रकार वाक्य में प्रयुक्त होकर परस्पर अन्वित होते हैं इस विषय में भारतीय विद्वानों में मतभेद है। प्राय: दो मत प्रचलित हैं-

1. अभिहितान्वयवाद और
2. अन्विताभिधानवाद।

डा. कपिदेव द्विवेदी ने दोनों मतों का विवेचन करते हुए वाक्य और पदों के सम्बन्ध को इस प्रकार अभिव्यक्त किया है-

अभिहितान्वयवाद

इस वाद के प्रवर्तक आचार्य कुमारिल भट्ट है। इनका मत 'अभिहितान्वयवाद' कहा जाता है। इसका अर्थ है- 'अभिहितानां पदार्थानाम् अन्वय:' पद अपने अर्थ को कहते हैं और उनका वाक्य में अन्वय हो जाता है। इस अन्वय से एक विशिष्ट प्रकार का वाक्यार्थ निकलता है। इस वाद को 'पद-वाद' कह सकते हैं। इस बाद में पदों का महत्त्व है और पद-समूह ही वाक्य है। पद के अतिरिक्त वाक्य का कोई महत्त्व नहीं है।

अन्विताभिधानवाद

इस वाद के प्रवर्तक आचार्य कुमारिल भट्ट के शिष्य आचार्य प्रभाकर गुरु हैं। इनका नाम प्रभाकर है। योग्यता में अपने गुरु कुमारिल से भी अधिक बढे हुए थे, अत: अपने गुरु का भी गुरु हो जाने के कारण इन्हें 'गुरु' कहा जाने लगा। इनका मत 'अन्विताभिधानवाद' कहा जाता है। इसका अर्थ है- अन्वितानां पदार्थानाम् अभिधानम्' वाक्य में पदों के अर्थ समन्वित रूप से विद्यमान रहते हैं। वाक्य को तोड़ने से पृथक्-पृथक् पदों का अर्थ ज्ञात होता है। वाक्य से पदों को निकालने को 'अपोद्धार' (Analysis) कहते हैं। इस वाद में वाक्य को महत्त्व दिया गया है, अत: इसे 'वाक्यवाद' भी कह सकते हैं। 'अन्विताभिधानवाद' के अनुसार पदों की स्वतंत्रा सत्ता नहीं है। वे वाक्य के अवयव हैं और वाक्य-विश्लेषण से उनका अर्थ निकलता है। इस मत के अनुसार 'वाक्य ही भाषा की सार्थक इकाई है'। आधुनिक भाषा-विज्ञान भी इस मत का पोषक है कि 'Sentence is a significant unit' (वाक्य ही सार्थक इकाई है)। आचार्य भतर्ृहरि ने वाक्यपदीय में इसी मत का समर्थन करते हुए कहा है-

पदे न वर्णा विद्यते वर्णेष्ववयवा न च।

वाक्यात् पदानामत्यन्तं प्रविवेको न कथन।। वाक्य . 1-73

(वर्णों की स्वतन्त्र सत्ता नहीं है और न वर्णों में अवयवों की। वाक्य के अतिरिक्त पदों की कोई स्वतंत्राता सत्ता नहीं है।)

विचार करने से ज्ञात होता है कि 'वाक्यवाद' ही ग्राह्य मत है। इसको इस प्रकार समझा जा सकता है। 'अंगों का समूह शरीर है' या 'शरीर के अवयव अंग हैं'। विचार करने पर स्पष्ट ज्ञात होता है कि- हाथ, पाँव, आँख, नाक आदि को मिलाकर शरीर नहीं बना है- अपितु ये सभी अंग हमारे शरीर के अवयव है। इसी प्रकार भाषा विचारों की अभिव्यक्ति का साधन है। मन में विचार या भाव समन्वित रूप में वाक्य के रूप में उदय होते हैं। उन वाक्यों को धारावाहिक रूप में हम उच्चारण द्वारा प्रकट करते हैं। विचार संज्ञा, सर्वनाम, क्रिया आदि पदों के रूप में उदय नहीं होते हैं, अत: वाक्य ही स्वाभाविक एवं स्वतंत्र सत्ता है। सामान्य जन को सिखाने के लिए वाक्य-विश्लेषण (अपोद्धार) द्वारा नाम, आख्यात, उपसर्ग, निपात के रूप में वाक्य-विश्लेषण करके पद बनाए जाते हैं और उनका अर्थ निर्धारित किया जाता है। यदि चिन्तन पदों के रूप में होगा तो विचारों का प्रवाह ही नहीं बनेगा।

वाक्य-प्रयोग वस्तुत: एक जटिल मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया है। वाक्य-प्रयोग का मनोवैज्ञानिक क्रम यह है-

1. **चिन्तन:** अपने अभीष्ट अर्थ का विचार करना,
2. **चयन:** उपयुक्त शब्दों को चुनना,
3. **भाषिक गठन:** व्याकरण के अनुरूप उन शब्दों को क्रमबद्ध लगाना,
4. **उच्चारण:** उच्चारण के द्वारा वाक्य रूप में उन्हें प्रकट करना। ये चारों चीजें बहुत सुसंबद्ध रूप में चलनी चाहिएं, तभी भाषा सुव्यवस्थित होगी। चिन्तन और उच्चारण में समरूपता न होने पर अव्यवस्था होगी। चिन्तन शिथिल होने पर अटकना पड़ेगा, अधिक तीव्र होने पर उच्चारण की गति साथ नहीं देगी। उच्चारण की गति तेज करने पर भाषा अस्पष्ट हो जाएगी और अर्थबोधक ठीक नहीं होगा।

डा. कर्णसिंह ने पद और वाक्य के सम्बन्ध को इस प्रकार अभिव्यक्त किया है-

"वाक्य एवं पद के पसग् में भारतीय विचारधारा में 'अभिहितान्वायवाद' तथा 'अन्विताभिधानवाद' का महत्त्व है। ये दोनों ही सिद्धान्त मीमांसकों के हैं तथा यह बतलाते हैं कि "वाक्यार्थ क्या है?'" भट्ट कुमारिल तथा उनके अनुयायी 'अभिहितान्वयवादी' हैं तथा गुरु प्रभाकर तथा उनके अनुयायी 'अन्विताभिधानवादी' हैं। अभिहितान्वयवादियों के अनुसार वाक्य की अपेक्षा 'पद' का महत्व अधिक है। पद से ही, पहले पदार्थ का ज्ञान होता है, पुन: पदार्थों के अन्वय से वाक्यार्थ का ज्ञान होता है। अत: पदों से मिलकर ही वाक्य बनता है। सरलता के लिए इस वाद को हम 'पदवाद' भी कहते हैं।

इसके विपरीत 'अन्विताभिधानवादियों के अनुसार पद की अपेक्षा 'वाक्य' का महत्त्व अधिक है। उनके अनुसार वाक्य से ही वाक्यार्थ का ज्ञान होता है। अपनी सुविधा के लिए ही वैयाकरण वाक्य का विश्लेषण पदों में करते हैं। अत: वाक्य को तोडकर ही पदेां को पृथक्-पृथक् किया जाता है। वस्तुत:, पदों का अपना स्वतंत्रा कोई महत्व नहीं है। सुविधा के लिए इस वाद को हम 'वाक्यवाद' कह सकते हैं इस दृष्टि से आधुनिक भाषाविज्ञान तथा अन्विताभिधानवाद में पर्याप्त समानता है।"

वाक्य के आवश्यक तत्त्व

भारतीय मनीषियों के अनुसार वाक्य में तीन तत्त्व अनिवार्य हैं-

1. योग्यता,
2. आकांक्षा तथा उ आसत्ति।

आचार्य विश्वनाथ ने वाक्य की परिभाषा देते हुए इन्हीं तीन तत्त्वों को स्वीकार किया है- वाक्यं स्याद् योग्यताकांक्षासत्रायुक्त: पदोच्चय:।

डा. कर्ण सिंह ने वाक्य के छह आवश्यक तत्त्व माने हैं। उपर्युक्त तीन तत्वों के अतिरिक्त वे सार्थकता, अन्वय और क्रम को भी आवश्यक तत्त्व मानते हैं। उन्होंने इन तत्त्वों का इस प्रकार वर्णन किया है-

सार्थकता

सार्थकता से तात्पर्य है कि वाक्य में प्रयुक्त पद सार्थक होने चाहिएँ। भाषा का अभिप्राय ही सार्थकता है, अत: उसकी इकाई, वाक्य में भी पदों का सार्थक होना अनिवार्य है। 'कमल सुन्दर है' में सभी पद सार्थक है, तथा 'मकल रसुन्द' आदि निरर्थक है। अत: वाक्य में ऐसे निरर्थक पदों का प्रयोग नहीं होना चाहिए।

योग्यता

योग्यता से तात्पर्य है कि पदों में विवक्षित भाव को कहने की क्षमता होनी चाहिए; अर्थात् पदार्थों के परस्पर सम्बन्ध मं बाधा नहीं होनी चाहिए। 'अिग्न सिचति' या 'आग से सींचता है' वाक्य में 'अग्नि' या 'आग' पद सींचने की योग्यता वाला नहीं है। अत: अयोग्य पदों का वाक्य में प्रयोग नहीं होना चाहिए।

आकांक्षा

आकांक्षा से तात्पर्य है- 'श्रोता की जिज्ञासा'। वाक्य में एक पद को सुनकर श्रोता में जो जिज्ञासा होती है, वाक्य के अन्य पदों से उसकी पूर्ति होनी चाहिए। अत: वाक्य में प्रयुक्त पद साकांक्ष होने चाहिऐं। इसके विपरीत 'आकांक्षा शून्य' 'गौकोरश्व: पुरुषो हस्ती: आदि या 'गाय, घोड़ा, पुरुष, हाथी, आदि पद-समूह वाक्य नहीं है; क्योंकि, इनमें से किसी भी एक पद को सुनकर श्रोता में दूसरे की सुनने की आकांक्षा नहीं होती।

सन्निधि:

सन्निधि से तात्पर्य है पदों का अविलम्ब उच्चारण। वाक्य में प्रयुक्त पदों का उच्चारण, बिना किसी विलम्ब के, एकसाथ किया जाना चाहिए। बहुत विलम्ब से कहे गये- "राम", "अच्छा", "लड़का" है" आदि पद वाक्य कहलाने के योग्य नहीं है।

अन्वय या अन्विति

अन्वय या अन्विति से तात्पर्य है कि पदों में व्याकरण की दृष्टि से लि ग, परुष, वचन, कारक आदि का सामंजस्य होना चाहिए। प्रत्येक भाषा में अन्विति के लिये अपने स्वतंत्रा नियम होते हैं।

संस्कृत तथा हिन्दी में कतर्ृवाच्य में कर्ता तथा क्रिया में, कर्मवाक्य में कर्म तथा क्रिया में अन्विति होती है।

उदाहरणार्थ-

संस्कृत में-

"राम: पठन्ति।" या "बालका: पठति"। या

"त्वं पठति।" या "अहं पठति"। या

"ग्रन्थ पठतिम्।" या "पुस्तकं पठति।"

आदि वाक्यों में अन्विति नहीं है, अंत: ये वाक्य नहीं है। इसी प्रकार-

हिन्दी में-

“राम जाती है।” “मैं आते हैं।”

“लड़की जाता है।” “वे आता हूँ।”

“रोटी खाया।” “हलुवा खायी।”

आदि वाक्य भी अन्विति के अभाव में वाक्य नहीं हैं।

अंग्रेजी में-

"Ram go" या "I goes" आदि में क्रिया तथा कर्ता में पुरुष तथा वचन की दृष्टि से अन्विति नहीं है।

अत: ये भी वाक्य नहीं हैं।

(a) संस्कृत में विशेषण तथा विशेष्य में भी अन्विति का होना आवश्यक है। जैसे-

“सुन्दर: बालक:।” “सुन्दरी बालिका।”

“सुन्दरं पुस्तकम्।” आदि।

(b) हिन्दी में कुछ स्थानों पर विशेषण-विशेष्य में अन्विति का नियम है। जैसे-

“अच्छा लड़का।” “अच्छी लड़की।”

कुछ स्थानों पर अन्विति का नियम नहीं है। जैसे-

“सुन्दर बालक।” “सुन्दर बालिका।”

(c) अंग्रेजी में विशेषण-विशेष्य की अन्विति का नियम नहीं है।

अत: प्रत्येक भाषा में अन्विति-सम्बन्धी जो भी नियम है, वाक्य में उनका पालन होना चाहिए।

क्रम

क्रम से तात्पर्य है- पदक्रम। इस सम्बन्ध में भी प्रत्येक भाषा में अपने नियम होते हैं। उदाहरणार्थ-

1. **संस्कृत में,** सामान्यतया वाक्य में पदों का क्रम निश्चित नहीं होता; जैसे- “राम: पुस्तकं पठति।” “पुस्तकं पठति राम:।” या “पठति राम: पुस्तकम्।” आदि

2. **हिन्दी में-** वाक्य में- कर्ता, कर्म और क्रिया के क्रम से पदों को रक्खा जाता है, जैसे- "राम खाता है।" इस वाक्य में पदों का क्रम बदलने से "आम राम खाता है।" यह वाक्य नहीं होगा।
3. **अंग्रेजी में-** वाक्य में कर्ता, क्रिया और कर्म के क्रम से पदों को रखा जाता है, जैसे- "Ram goes to school."

अत: पदक्रम का पालन भी वाक्य के लिए आवश्यक है। उपर्युक्त छ: आवश्यक तत्त्वों के अतिरिक्त लघुत्तम को भी वाक्य का सातवाँ तत्त्व स्वीकार किया जा सकता है। इसके अनुसार अर्थ की अधिकाधिक पूर्णता के साथ ही वाक्य को लघु से लघु भी होना चाहिए।"

डा. कपिलदेव द्विवेदी विश्वनाथ द्वारा बताए गए तीन तत्त्व अर्थात् आकांक्षा, योग्यता और आसत्ति को ही आवश्यक मानते हैं। परन्तु उन्होंने सार्थकता और अन्विति को भी स्वीकार कर लिया है। डा. द्विवेदी योग्यता का विश्लेषण करते हुए दो प्रकार की अयोग्यता स्वीकार करते हैं- अर्थमूलक अयोग्यता तथा व्याकरणमूलक अयोग्यता। विषय को समझने के लिए उनके ही शब्द उद्घृत करना समीचीन है-

इनका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है-

1. **आकांक्षा:** आकांक्षा का अर्थ है- अपेक्षा या जिज्ञासा की असमाप्ति। वाक्य में प्रयुक्त शब्दों को एक दूसरे की अपेक्षा रहती है। कर्ता को कर्म और क्रिया की अपेक्षा रहती है; कर्म को कर्ता एवं क्रिया की तथा क्रिया को कर्म और क्रिया की अपेक्षा रहती है; कर्म को कर्ता एवं क्रिया की तथा क्रिया को कर्ता एवं कर्म की अपेक्षा को 'जिज्ञासा' भी कह सकते हैं। इस अपेक्षा या जिज्ञासा की पूर्ति होने पर ही वाक्य बनता है। आकांक्षा की पूर्ति के बिना वाक्य अपूर्ण रहता है। इसलिए वाक्य में पदों का साकांक्ष होना अनिवार्य है। साकांक्षता के कारण वाक्य में पद परस्पर संबद्ध होते हैं जैसे केवल 'राम' कहने से वाक्य पूरा नहीं होता है। जिज्ञासा होती है कि वह क्या करता है?, इसी प्रकार केवल 'पुस्तक' कहने से भी वाक्य की पूर्ति नहीं होती। पुस्तक का क्या होता है? राम: पुस्तकं पठति (राम पुस्तक पढ़ता है), वाक्य में कर्ता 'राम', 'पुस्तक' नाम के कर्म को, 'पढ़ना' क्रिया करता है। ये तीनों पद 'राम: पुस्तकं पठति' परस्पर आकांक्षा-युक्त (साकांक्ष, अपेक्षायुक्त) हैं, अत: वाक्य पूर्ण हुआ। आकांक्षा के द्वारा श्रोता की जिज्ञासा की पूर्ति होती है, साकांक्ष पद ही वाक्य होते हैं। आकांक्षा-रहित गाय, अÜव, मनुष्य आदि शब्द वाक्य नहीं होते।

2. **योग्यता:** योग्यता का अर्थ है- पदों में पारस्परिक संबन्ध की योग्यता या क्षमता। अर्थात्- पदों के द्वारा जो अर्थ कहा जा रहा है, उसको क्रियात्मक रूप देने की योग्यता या क्षमता होनी चाहिए। इसका अभिप्राय यह होता है कि पदों के अन्वय में कोई बाधा न हो। पदों के अन्वय में दो प्रकार से बाधा पडती है-

    1. **अर्थमूलक बाधा या अयोग्यता:** कोई वाक्य व्याकरण की दृष्टि से ठीक हो, परन्तु अर्थ या प्रतीति की दृष्टि से अयोग्य या अनुपयुक्त हो तो वह वाक्य नहीं होगा। जैसे- स वहिन्ना सि×चति (वह आग से सींचता है), स वायुना लिखति (वह हवा से लिखता है)। आग से सींचा नहीं जा सकता है और न हवा से लिखा जा सकता है, अत: ये दोनों वाक्य व्याकरण की दृष्टि से शुद्ध होने पर भी अर्थ की दृष्टि से अयोग्य हैं, अत: ये दोनों वाक्य व्याकरण की दृष्टि से शुद्ध होने पर भी अर्थ की दृष्टि से अयोग्य हैं, अत: वाक्य नहीं है। यहाँ पर अर्थ या प्रतीति संबन्धी बाधा है।
    2. **व्याकरण-मूलक बाधा या अयोग्यता:** वाक्य यदि अर्थ की दृष्टि से ठीक हो और व्याकरण की दृष्टि से अशुद्ध होतो वह वाक्य नहीं माना जाएगा। लिंग, विभक्ति, वचन विशेषण आदि में 'व्याकरणिक अन्विति' या एकरूपता होनी चाहिए। निम्नलिखित वाक्यों में व्याकरण की दृष्टि से अयोग्यता है: - 1. सुशीला जाता है। 2. राम आती है। 3. मैं सुन्दरी पुस्तक देखता है।4. राम ने बोला। इनमें लिंग, विभक्ति, विशेषण आदि की अयोग्यता है। अंगे्रजी में व्याकरणिक दृष्टि से एकरूपता को ब्वदहतनमदबम या ब्वदबवतक कहते हैं। हिन्दी में व्याकरणिक एकरूपता को 'अन्विति' या 'पदों की अन्विति' कहते हैं। अंगे्रजी के ब्वदहतनमदबम या ब्वदबवतक का अभिप्राय संस्कृत के 'योग्यता' शब्द में समाहित है।
    3. **आसत्ति (संनिधि):** आसत्ति का अर्थ है- समीपता। इसको ही संनिधि भी कहते हैं। समीपता से अभिप्राय है कि वाक्य में प्रयुक्त पद लगातार या क्रमबद्ध रूप से उच्चरित हों। बीच में आवश्यकता से अधिक समय देने पर उन पदों का क्रम टूट जाएगा और वे वाक्य नहीं बनेंगे। 'मैं खाना खाता हूँ' में 'मैं खाना' आज बोला गया और 2 घंटे या 1 दिन बाद कहा गया- 'खाता हूँ' समय का अधिक व्यवधान हो जाने से यह वाक्य नहीं बनेगा और न इससे कोई अर्थ निकलेगा। इसलिए समय की समीपता या सानिध्य अनिवार्य है, जिससे वाक्य क्रमबद्ध हो सके।

इस प्रकार आचार्य विश्वनाथ ने आकांक्षा, योग्यता और आसत्ति से युक्त पदों के समूह को वाक्य कहा है। इसी प्रकार उक्त गुणों से युक्त वाक्यों के समूह को 'महावाक्य' नाम दिया है। सभी महाकाव्य आदि ग्रन्थ 'महावाक्य' हैं।

कुमारिल ने तन्त्रावार्तिक में वाक्यों से महावाक्य बनने में अंगांगिभाव से अपेक्षा होने से पुन: समन्वय होकर एकवाक्यता मानी है।1 कुछ विद्वानों ने आकांक्षा, योग्यता और आसत्ति के अतिरिक्त दो अन्य तत्त्वों का उल्लेख किया है- 1. सार्थकता; 2. अन्विति। वस्तुत: ये दोनों तत्त्व 'योग्यता' में ही आ जाते हैं।

1. **सार्थकता:** वाक्य में प्रयुक्त शब्द सार्थक होने चाहिएं। पद तभी वाक्य बनते हैं, जब वे सार्थक हों। 'योग्यता' के द्वारा पदों की सार्थकता भी आवश्यक है। सार्थक पद ही अर्थ-प्रतीति की योग्यता रखते हैं। अत: सार्थकता का पृथक् उल्लेख अनावश्यक है।
2. **अन्विति (अन्वय):** अन्विति का अर्थ है- व्याकरण की दृष्टि से एक-रूपता। लिंग, वचन, विभक्ति, विशेषण आदि समरूपता हों। लिंगभेद, वचनभेद, विभक्तिभेद आदि से व्याकरण-सम्बन्धी अनुरूपता विच्छिé होती है, अत: अन्विति की आवश्यकता है। ऊपर 'योग्यता' में व्याकरणमूलक बाधा का अभाव भी अनिवार्य बताया गया है, अत: अन्विति या अन्वय को पृथक् मानना आवश्यक नहीं है। व्याकरण-सम्बन्धी अन्विति को अंग्रजी में Congruence, Concord, Agreement कहते हैं।

डा. भोलानाथ तिवारी ने 'वाक्य के आवश्यक तत्त्व' जैसी अवधारणा का विवेचन करते हुए पाँच तत्त्वों को स्वीकार किया है। पदक्रम को आवश्यक तत्त्वों में सम्मिलित नहीं किया है।

वाक्य में पदविन्यास

पाश्चात्य विद्वानों ने वाक्य में प्रयुक्त होने वाले पदों से सम्बन्धित चार आवश्यक विशेषताओं का वर्णन किया है-

1. चयन (Selection),
2. क्रम (Order),
3. ध्वनि परिवर्तन (Modification) तथा
4. स्वर परिवर्तन (Modulation)।

डा. कपिलदेव द्विवेदी ने इन चारों तत्त्वों का विवेचन इस प्रकार किया है-

वाक्य में पद-विन्यास के आवश्यक गुण

भारतीय आचायोंऋ ने वाक्य में आकांक्षा, योग्यता और आसत्ति गुणों का होना अनिवार्य बताया है। पाश्चात्य भाषाशा िस्त्रायों ने वाक्य में पद-विन्यास-संबंधी चार विशेषताओं का उल्लेख किया है। इन्हें (Features of arrangement) जाता है। ये हैं- 1. चयन (Selection), 2. क्रम (Order), 3. ध्वनि परिवर्तन (Modification) तथा 4. स्वर परिवर्तन (Modulation)।

चयन

चयन का अर्थ है- वाक्य में प्रयुक्त होने वाले उपयुक्त पदों का चयन। यह चयन दो प्रकार से होता है- (i) अर्थ की दृटि से, (ii) रूप की दृष्टि से

1. **अर्थ की दृटि से चयन:** भाव और भाषा की दृष्टि से किस वाक्य में कौन सा शब्द या पद अत्यन्त उपयुक्त है, उसका ही प्रयोग करना। यह आर्थिक चयन है आर्थिक-चयन मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया है। किस भाव के लिए कौन शब्द उपयुक्त होगा और किसका प्रयोग होना चाहिए। यह बौद्धिक प्रक्रिया में आएगा। उपयुक्त शब्दों का ही प्रयोग हो, यह वक्ता की कामना रहती है। वह पर्यायवाची शब्दों में से अत्यन्त उपयुक्त शब्द का प्रयोग करता है। जैसे स्त्रीवचाक शब्दों में युवती, नारी, रमणी, कामिनी, वामा, अबला, महिला आदि शब्द हैं। यवती में यौवन है, नारी में नर की संगिनी, भाव है। रमणी में रमणत्व या रति, कामिनी में कामभावना, वामा में वक्रता, अबला में असहायत्व मुख्य है। 'अबला का सौन्दर्य दर्शनीय है' यह वाक्य असंगत एवं अनुपयुक्त है, क्योंकि दर्शनीय सौन्दर्य के लिए युवती, तरुणी या कामिनी शब्द उपयुक्त हैं। इसी प्रकार सूक्ष्मतापूर्वक चयन करना अर्थ-पक्ष है।
2. **रूप की दृटि से चयन:** इसका सम्बन्ध रचना से है। व्याकरण और प्रयोग की दृष्टि से वह शब्द उपयुक्त हो। यह योग्यता एवं अन्विति का कार्य है। 'न ऊघो का लेना, न माघो का देना', 'न घर का न घाट का'

मुहावरों में 'न.....न' का प्रयोग शिष्ट-संमत है, पर मैं घर न जाऊँगा' में 'न' का प्रयोग अशुद्ध है, यहाँ पर 'नहीं' लगेगा- मैं घर नहीं जाऊँगा। इसी प्रकार व्याकरण-संमत शब्दों का प्रयोग रूपात्मक चयन है।

क्रम

क्रम का अभिप्राय है कि भाषा में प्रयुक्त वाक्यों के पदों को किस क्रम में रखा जाए। इसको पद-क्रम कहते हैं। सभी भाषाओं में पद-क्रम एक प्रकार नहीं है। संस्कृत और हिन्दी में सामान्यतया पदक्रम का प्रकार है- कर्ता, कर्म, क्रिया। अंग्रेरजी भाषा आदि में पदक्रम है- कर्ता, क्रिया, कर्म। जैसे- संस्कृत- राम: पुस्तकं पठति। हिन्दी - राम पुस्तक पढता है। अंग्रेजी- Ram Reads the book. संस्कृत में पद-क्रम में परिवर्तन भी होते हैं, परन्तु वह सामान्य नियम नहीं है। संस्कृत में पद-क्रम में परिवर्तन करने पर भी विभक्तियों के कारण कर्ता कर्ता ही रहता है और कर्म कर्म। जैसे- राम: रावणं हन्ति। रावणं राम: हन्ति। हन्ति रावणं राम:। इन तीनों में भी मारने वाला राम रहा और मरने वाला रावण। संस्कृत, जर्मन, रूसी आदि श्लिष्ट योगात्मक भाषाओं में विभक्तियाँ शब्दों के साथ मिली रहती हैं। शब्दों का अर्थ निश्चित रहता है। अत: पदक्रम बदलने पर भी अर्थ में भेद नहीं आता। सामान्यतया पदक्रम बदलने के दो कारण हैं- 1. बल, 2. छन्द में प्रयोग। किसी शब्द पर बल देना होता है तो उसे पहले रख देते हैं। 'नहीं पढ़ूँगा' नहीं पर बल है। छन्द की मात्राओं आदि की पूर्ति के लिए शब्दों को आगे-पीछे रखा जाता है।

ध्वनि-परिवर्तन

वाक्य में दो ध्वनियों के समीप आने से उनमें कुछ ध्वनि-परिवर्तन हो जाते हैं। इसको 'सन्धि' कहते हैं। जैसे- जगत् + ईश = जगदीश, अच् + अन्त = अजन्त, रामा + ईश = रमेश, पुन: + जन्म = पुनर्जन्म, मनस् + रथ = मनोरथ। इसी प्रकार महात्मा, महोदय, अध्यात्म आदि में ध्वनि-परिवर्तन है। बोलचाल में ध्वनि-परिवर्तन के अनेक उदाहरण मिलते हैं। लिखते कुछ हैं, बोलते कुछ और हैं । जैसे- कब आओगे > कब आओगे > कबाओगे। कब तक > कब्तक्, जल लाना > जल्लाना, रखा > रक्खा, नारायण विहार > नरैना बिहार, पंडितजी > पंडिज्जी।

स्वर-परिवर्तन

वाक्यों में बलाघात आदि के कारण स्वरों में कहीं आरोह, कहीं अवरोह होता है। जिस ध्वनि पर बल देते हैं, वह उदात्त हो जाती है। उसे ऊँची आवाज (आरोह) के साथ बोलते हैं। जिस पर बल नहीं देते, वह मध्यम या निम्न ध्वनि में

बोली जाती है। स्वर-परिवर्तन से ही उठा (उठा गया) और उठा' (उठावो), पढा (पढ लिया)- पढा' (पढावो) में अर्थ में अन्तर हो जाता है। 'आपने पुस्तक पढ ली न', 'आपने खाना खा लिया है न' में निषेधार्थक 'न' (नहीं) शब्द उच्चारण में स्वर-भेद के कारण ही विधि-वाचक हो गया है। यहाँ 'न' का निषेध अर्थ नहीं है।

वाक्य और पदक्रम

वाक्य में पदक्रम एक महत्पूर्ण तत्त्व हैं संस्कृत जैसे श्लिष्ट योगात्मक भाषाओं में पदक्रम इतना महत्वपूर्ण नहीं क्योंकि शब्द के साथ जुड़ी हुई विभक्ति सर्वत्रा अपना वही अर्थ देगी चाहे उस पद को किसी भी स्थान पर रख दें। जैसे राम: पुस्तकं पठति वाक्य में पदों के स्थान बदलने से उनके अर्थ में कोई अन्तर नहीं आएगा। पुस्तकं पठति राम: या पठति पुस्तकं राम: कैसे भी लिखें अर्थ एक ही होगा- राम पुस्तक पढता है। परन्तु जो धातु वियोगात्मक हो गई है उनमें या अयोगात्मक भाषाओं में पदक्रम का बहुत महत्त्व है। इन भाषाओं में पदों के स्थान परिवर्तन के साथ ही अर्थ में परिवर्तन हो जाता है।

पदक्रम से सम्बन्धित डा. भोलानाथ तिवारी का मत इस प्रकार है।

वाक्य में पद-क्रम

वाक्य में किस प्रकार के पदों का क्या स्थान, होता है, इसका भी अध्ययन वाक्य विज्ञान में करते हैं। (आगे अयोगात्मक वाक्य पर विचार करते समय इस सम्बन्ध में प्रकाश डाला जाएगा)।

वाक्य में पद-क्रम की दष्टि से भाषाएँ दो प्रकार की हैं। एक तो वे हैं, जिन वाक्य में शब्दों (पदों) का स्थान निश्चित नहीं है। इन भाषाओं में शब्दों में विभक्ति लगी होती है, अतएव किसी भी शब्द को उठाकर कहीं रख दें अर्थ में परिवर्तन नहीं होता। ग्रीक, लैटिन, अरबी, फारसी तथा संस्कृत आदि इसी प्रकार की हैं।1 इनके ही वाक्य को शब्दों के स्थान में परिवर्तन करके कई प्रकार से कहा जा सकता है। उदाहरण हैं-

अरबी

ज़रब्अ जैदुन अम्रन = जैद ने अमर को मारा।

जरब्अ अम्रन जैदन = अमर को जैद ने मारा।

फ़ारसी

जैद अमररा जद = जैद ने अमर को मारा।

अमररा जैद जद = अमर को जैद ने मारा।

संस्कृत

जैद: अमरं अहनत् = जैद ने अमर को मारा।

अमरं जैद: अहनत् = अमर को जैद ने मारा।

दूसरी प्रकार की भाषाएँ वे होती हैं, जिनमें वाक्य में शब्द (पद) का क्रम निश्चित रहता है। ऊपर के उदाहरणों में हम देखते हैं कि शब्दों के स्थान परिवर्तन से अर्थ में कोई फर्क नहीं आया किंतु निश्चित स्थान या स्थान-प्रधान भाषाओं में वाक्य में शब्द का स्थान बदलने से अर्थ बदल जाता है। इसका सर्वोत्तम उदारण चीनी है। यों हिंदी, अंग्रेजी आदि आदि आधुनिक आर्य भाषाओं में भी यह प्रवृत्ति कुछ है। अंग्रेजी का एक उदाहरण है-

अंग्रेजी

Zaid killed Amar = जैद ने अमर को मारा।

Amar killed Zaid = अमर ने जैद को मारा (यहाँ शब्द के स्थान परिवर्तन से वाक्य का अर्थ उलट गया)

चीनी में तो यह प्रवृत्ति विशेष रूप से मिलती है-

पा ताड् शेन = पा शेन को मारता है।

शेन ताड् पा = शेन पा को मारता है।

अंग्रेजी में सामान्यत: कर्त्ता, क्रिया और तब कर्म आता है पर प्रश्नवाचक वाक्य में क्रिया का कुछ अंश पहले ही आ जाता है। विशेषण संज्ञा के पहले आता है और क्रिया-विशेषण क्रिया के बाद में। हिन्दी में कर्त्ता, कर्म और तब क्रिया रखते हैं। सामान्यत: विशेषण संज्ञा के पूर्व तथा क्रिया-विशेषण क्रिया के पूर्व रखते हैं। चीनी में अंग्रेजी की भाँति कर्ता के बाद क्रिया और तब कर्म रखते हैं। यद्यपि इसकी कुछ बोलियों में कर्म पहले भी आ जाता है। विशेषण और क्रिया-विशेषण हिन्दी की भाँति प्राय: संज्ञा और क्रिया के पूर्व आते हैं। प्रश्नवाचक शब्द (जैसे क्या) अंग्रेजी तथा हिन्दी में वाक्य के आरम्भ में आते है पर चीनी में वाक्य के अन्त में।

फ़ान त्स ल मा?

खाना खा लिया क्या?

किसी भी भाषा के शब्दों के स्थान की निश्चितता के ये नियम निरपवाद नहीं है। यहां तक कि इस प्रकार की प्रधान चीनी में भी नहीं। ऊपर का चीनी वाक्य को इस प्रकार भी कहा जा सकता है-

त्स फ़ाल ल मा?

खा खाना लिया क्या? = खाना खा लिया क्या?

पदक्रम के सम्बन्ध में डा. द्विवेदी का विवेचन इस प्रकार है-

1. विश्व की अधिकांश भाषाओं में वाक्य में पद-क्रम निश्चित है। उसी क्रम से उस भाषा में वाक्यों का प्रयोग होता है। पद-क्रम की दृष्टि से विश्व की भाषाओं को दो वर्गों में बाँटा जा सकता है-

1. **परिवर्तनीय पद-क्रम:** परिवर्तनीय पद-क्रम वाली वे भाषाएँ हैं, जिनमें वक्ता की इच्छा के अनुसार पद-क्रम में परिवर्तन किया जा सकता है। ऐसी भाषाएँ हैं- संस्कृत, ग्रीक, लैटिन, अरबी, फ़ारसी आदि। इनमें शब्द में विभक्तियाँ लगी होती हैं, अत: स्थान बदलने पर भी कर्ता आदि का भेद ज्ञात होने से अर्थ में अन्तर नहीं पडता। जैसे- राम: रावणं हन्ति (राम रावण को मारता है), रावणं हन्ति राम:।

2. **अपरिवर्तनीय पद-क्रम:** अपरिवर्तनीय पद-क्रम वाली वे भाषाएँ हैं, जिनमें पद-क्रम में परिवर्तन नहीं किया जा सकता है। इनमें पद-क्रम में परिवर्तन से अर्थ में अन्तर हो जाता है, जैसे- चीनी भाषा। चीनी भाषा में पदक्रम है- कर्ता, क्रिया, कर्म। (ताड् मारना)। वाड् ताड् चाड् - वाड् चाड् को मारता है। हिन्दी और अंग्रेजी में प्रश्नवाचक शब्द (क्या, ूीलए ूीमद आदि) वाक्य आदि में आते हैं, परन्तु चीनी भाषा में अन्त में आते हैं। जैसे- वाड् श्येन शेड् त्साई ज्या मा - क्या श्री वाड् पर हैं? (श्येन शेड् ¾ श्री, श्रीमान्, त्साई = पर, ज्या = घर, मा = क्या) हिन्दी, अंग्रेजी आदि में भी सामान्यतया पदक्रम अपरिवर्तनीय रहता है।

2. वाक्य में स्वाराघात: वाक्य में संगीतात्मक और कलात्मक दोनों प्रकार का स्वराघात प्राप्त होता है। संगीतात्मक स्वराघात से आश्चर्य, शंका, निराश आदि का भाव व्यक्त किया जाता है। जैसे- 'वे चले गए' के अनेक अर्थ होंगे। संगीतात्मक स्वराघात वाक्य-सुर के रूप में होता है। किसी पद-विशेष पर बल देने से बलात्मक स्वराघात होता है। जैसे- 'मैं अभी जाऊँगा' में मैं, अभी और जाऊँगा में से जिस पर बल देंगे, वह अर्थ मुख्य होगा।

3. वाक्य में पद-लोप: प्रयोग और व्यवहार के आधार पर वाक्य में संक्षेप के लिए पदों का लोप हो जाता है। ऐसे स्थानों पर क्रिया का लोप रहता है और उसका अध्याहार (स्मरण) करके पूर्ण अर्थ का ज्ञान होता है। जैसे- कुत:? (कहाँ से, कहाँ से आ रहे हो?) प्रयागात् (प्रयाग से, अर्थात् प्रयाग से आ रहा हूँ)। इस प्रकार कर्ता, क्रिया आदि से हीन वाक्यों में यथायोग्य कर्ता, क्रिया आदि का अध्याहार कर लिया जाता है।

4. वाक्य और पदक्रम-विषयक तथ्य: वाक्य और पदक्रम के संबन्ध में विचार करते समय निम्नलिखित तथ्यों का ध्यान रखना चाहिए:-

1. भाषा यदि दीर्घकाल से चली आ रही है तो उसकी वाक्य-रचना दो विभिन्न कालों में भिन्न हो सकती है। ;
2. वाक्य-रचना पर अन्य भाषाओं का भी प्रभाव पड़ता है। आधुनिक बोल-चाल की हिन्दी पर अंग्रेजी वाक्य-रचना का प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। जैसे- 'उसने कहा कि मैं प्रयाग नहीं जाऊँगा' के स्थान पर 'उसने कहा कि वह प्रयाग नहीं जाएगा'।
3. शिक्षा के प्रभाव के कारण शिक्षितों के द्वारा प्रयुक्त भाषा में कुछ कृत्रिमता रहती है, अत: शिक्षितों की अपेक्षा अशिक्षितों की भाषा में प्रयुक्त पदक्रम अधिक मान्य एवं विश्वसनीय होता है।

4. पदक्रम के विशिष्ट अध्ययन के लिए पद्यात्मक काव्यों आदि की अपेक्षा गद्य की भाषा अधिक उपयोगी होती है।
5. पदक्रम के ज्ञानार्थ अनुवाद आदि की अपेक्षा मूल पाठ अधिक उपयुक्त होता है।
6. पदक्रम के अध्ययन के लिए अलंकृत काव्यात्मक भाषा की अपेक्षा सरल सुबोध अधिक उपयुक्त है। इसमें भाषा का स्वाभाविक प्रवाह देखने को मिलता है।
7. पदक्रम के अध्ययन के लिए लिखित भाषा की अपेक्षा उच्चरित भाषा का अधिक महत्त्व है। उच्चरित भाषा में भाषा के स्वाभाविक रूप का साक्षात्कार होता है।

वाक्य रचना

पाश्चात्य विद्वानों ने वाक्य रचना के दो प्रकार माने हैं-

1. अन्त: केन्द्रिक (Endocentric) तथा
2. वाह्य केन्द्रिक (Exocentric)।

डा. भोलानाथा तिवारी ने इनकी विवेचन इस प्रकार किया है-

अन्त:केन्द्रित रचना उसे कहते हैं, जिसका केन्द्र उसी में हो। 'लड़का' और 'अच्छा लड़का' में वाक्य के स्तर पर कोई अन्तर नहीं है। 'लड़का आता है' भी कह सकते हैं और 'अच्छा लड़का आता है' भी। यहाँ प्रमुख शब्द लड़का है। वाक्य के स्तर पर व्याकरणिक रचना की दृष्टि से 'अच्छा लड़का' वही है, जो 'लड़का' है। यहाँ 'अच्छा लड़का' अन्त:केन्द्रित रचना है। इसके कई रूप हो सकते हैं-

1. विशेषण + संज्ञा (काला कपड़ा, बदमाश आदमी),
2. क्रियाविशेषण + विशेषण (बहुत तेज, खूब गंदा),
3. क्रियाविशेषण + क्रिया (तेज दौड़ा, खूब खाया),
4. संज्ञा + विशेषण उपवाक्य (आदमी, जो गया था; फल, जो पकेगा),
5. सर्वनाम + विशेषण उपवाक्य (वह, जो दौड़ रहा था),

6. सर्वनाम + पूर्वसर्गात्मक वाक्यांश (Prepostional Pharase) (Those on the plane) तथा
7. क्रिया + क्रियाविशेषण उपवाक्य (गया, जहाँ हवाई जहाज गिरा था) आदि प्रमुख हैं।

जो रचना ऐसी नहीं होती उसे बहिष्केन्द्री या बहिष्केन्द्रित कहते हैं। इसमें अन्त:केन्द्रित भी की भाँति केवल एक शब्द पूरी रचना के स्थान पर नहीं आ सकता। या दूसरे शब्दों में पूरी रचना एक शब्द के विशेषता नहीं बतलाती। 'हाथ से' इसी प्रकार की रचना है। इसमें न तो केवल 'हाथ' 'हाथ से' का कार्य कर सकता है, और न 'से'। दोनों की आवश्यक हैं। किसी के बिना रचना पूर्ण नहीं हो सकती है। यहाँ रचना के दोनों घटकों के काम वाक्य में पूर्णत: दो हैं। इन दोनों धटकों या अवयवों में किसी का भी केन्द्र इस रचना में नहीं है। (बहि-केन्द्री)। 'आदमी गया', 'घोड़े को', 'पानी में' आदि ऐसी ही रचनाएँ हैं।

डा. कपिलदेव द्विवेदी ने इस विषय पर विस्तर से चर्चा की है। उनके अनुसार Endo-centric (एण्डो-सेन्ट्रिक) शब्द दो शब्दों से मिलकर बना है- Endo (अन्तर्गत, अन्दर) ग्रीक- म्दकवद (= within) का समस्त पदों में प्रयुक्त होने वाला संक्षिप्त रूप है। Centric (सेन्ट्रिक) शब्द Centrie (सेन्टर-केन्द्र) का विशेषणात्मक रूप है। अत: Endocentric का अनुवाद होगा- अन्त: केन्द्रिक। अन्त:केन्द्रिक उस रचना को कहते हैं, जिसका केन्द्र अन्दर हो। इसको अन्तर्मुखी रचना भी कह सकते है। यदि रचना का पद-समूह (वाक्यखण्ड) उतना ही काम करता है, जितना उसके एक या अनेक निकटतम अवयव करते हैं, तो उसे अन्त:केन्द्रिक वाक्यांश कहेंगे, और ऐसी रचना को अन्त:केन्द्रिक रचना कहेंगे।1 इसमें मुख्यरूप से विशेषण-विषय संबन्ध होता है। इसमें एक या अनेक विशेष्य होते हैं और उनके एक या अनेक विशेषण हो सकते हैं। जैसे- सन्दुर फूल, शुद्ध दूध, स्वादिष्ट भोजन, सज्जन व्यक्ति, सीधी गाय आदि में एक विशेषण और एक विशेष्य है। अत्यन्त सुन्दर फूल, पूर्ण शुद्ध दूध, अत्यधिक स्वादिष्ट भोजन में एक विशेष्य के दो-दो विशेषण है। 'धनुर्धर राम और योगिराज कृष्ण' वाक्यांश में दो विशेष्य और दो विशेषण हैं। इस प्रकार अन्त: केन्द्रिक रचना के अनेक भेद हैं। जैसे-

1. विशेषण + संज्ञा शब्द - शुद्ध दूध, काला आदमी, लाल घोड़ा।
2. क्रिया-विशेषण + विशेषण - बहुत स्वच्छ, अत्यन्त कुटिल, अत्यधिक मनोहर, खूब शरारती।
3. क्रिया-विशेषण + क्रिया - शीघ्र आया, तुरन्त गया, खूब खेला, तेज चला, चुप बैठा।

वाक्यों के प्रकार

विश्व की भाषाओं में अनेक प्रकार की वाक्य रचना देखने को मिलती है। वाक्य रचना का विश्लेषण अनेक आधारों पर किया जाता है। डा. कर्णसिंह ने चार आधार माने हैं जबकि डा. द्विवेदी ने पाँच आधार माने गए हैं। डा. द्विवेदी ने डा. कर्णसिंह द्वारा बताए गए सभी आधारों को स्वीकार किया है तथा शैली के आधार को अतिरिक्त माना है। डा. द्विवेदी का विवेचन इस प्रकार है-

विभिन्न दृष्टिकोण से विचार करने पर भाषा में प्रयुक्त वाक्यों के अनेक प्रकार दृष्टिगोचर होते हैं। इनको संक्षेप में इस प्रकार रखा जा सकता है-

1. आकृति-मूलक भेद।
2. रचना-मूलक भेद।
3. अर्थ-मूलक भेद।
4. क्रिया-मूलक भेद।
5. शैली-मूलक भेद।

आकृतिमूलक भेद

विश्व की भाषाओं का आकृतिमूलक-भेद (Morphological classification) किया जाता है। प्रकृति (Root) और प्रत्यय (Affix) या अर्थतत्व और संबन्धतत्व किस प्रकार मिलते हैं, इसके आधार पर वाक्य भी चार प्रकार के मिलते हैं-

1. **अयोगात्मक वाक्य: अयोग का अर्थ है-** प्रकृति और प्रत्यय अथवा अर्थतत्व और सम्बन्धतत्व का मिला हुआ न होना। अयोगात्मक भाषाओं में प्रकृति प्रत्यय अलग-अलग रहते हैं। इनमें कारक-चिन्हन आदि स्वतंत्रा शब्द होते हैं। चीनी भाषा अयोगात्मक भाषा है। इसमें पद-क्रम निश्चित है- कर्ता, क्रिया, कर्म। विशेषण कर्ता के पूर्व आता है। जैसे-
    - ता: जेन (बड़ा आदमी), (ता-बड़ा, जेन-आदमी)
    - जेन ता (आदमी बड़ा है) (इसमें 'ता' विधेय हो गया है)

- वो ता नी (मैं तुझे मारता हूँ), (वो-मैं, ता-मारना, नी-तुम)
- नी ता वो (तू मुझे मारता है), (नी-तू, ता-मारना, वो-मैं)

2. **श्लिष्ट योगात्मक वाक्य:** ऐसे वाक्य में प्रकृति और प्रत्यय श्लिष्ट (मिले हुए, जुड़े) होते हैं। इनमें प्रकृति (शब्द, धातु) और प्रत्यय को अलग-अलग करना कठिन होता है। भारोपीय परिवार की प्राचीन भाषाएँ संस्कृत, लैटिन, ग्रीक, अवेस्ता आदि इसी प्रकार की हैं। संस्कृत के उदाहरण हैं- वृक्षात् पत्राम् अपतत् (पेड़ से पत्ता गिरा)। अहं गुरुं द्रष्टुम् अगच्छम् (मैं गुरु को देखने गया)। यहाँ वृक्ष + पंचमी एकवचन पत्रा + द्वितीया एकवचन पत् + लड् प्र. पु. एक. है। अस्मद् + प्रथमा एकवचन गुरु + द्वितीया एकवचन दृश् + तुम्, गम् + लड् प्र. पु. एकवचन है। इन वाक्यों में प्रकृति और प्रत्यय को सरलता से अलग नहीं किया जा सकता है।
3. **अश्लिष्ट योगात्मक वाक्य:** ऐसे वाक्यों में प्रकृति और प्रत्यय अथवा अर्थतत्त्व और सम्बन्धतत्त्व अश्लिष्ट (घनिष्ठता से न मिलना) ढंग के मिले हुए होते हैं। प्रकृति और प्रत्यय जुड़े होने पर भी तिल-तण्डुल-वत् (तिल और चावल की तरह) अलग-अलग देखे जा सकते हैं। तुर्की भाषा में इसके सुन्दर उदाहरण मिलते हैं। जैसे- एल्-इम्-डे-कि (मेरे हाथ में है, एल्-हाथ, इम्-मेरा, डे-में, कि-होना (El-im-de-ki)।
4. **प्रश्लिष्ट योगात्मक वाक्य:** ऐसे वाक्यों में प्रकृति और प्रत्यय इतने अधिक घनिष्ठ रूप में मिल जाते हैं कि पदों को पृथक् करना कठिन होता है। पूरा वाक्य एक शब्द-सा हो जाता है। ऐसे उदाहरण दक्षिण अमेरिका की चेरोकी भाषा, पेरीनीज पर्वत के पश्चिमी भाग में बोली जानेवाली बास्क भाषा आदि में मिलते हैं।
    - (a) चेरोकी में-नाधोलिनिन (हमारे पास नाव लाओ)
    - (b) बास्क में-हकारत (मैं तुझे ले जाता हूँ)
    - हिन्दी आदि की बोल-चाल की भाषा में ऐसे उदाहरण मिलते हैं-
    - (a) भोजपुरी - सुनलेहलीहं (मैंने सुन लिया है)
    - (b) मेरठ की बोली-उन्नेका (उसने कहा)
    - (c) गुजराती-मकुंजे (मैं कहमुं जे, मैंने यह कहा कि)

रचना-मूलक भेद

वाक्य की रचना या गठन के आधार पर वाक्य के तीन भेद होते हैं।

1. **सामान्य वाक्य:** इसमें एक उद्देश्य होता है और एक विधेय अर्थात् एक संज्ञा और एक क्रिया। जैसे- वह पुस्तक पढता है।
2. **मिश्र वाक्य:** इसमें एक मुख्य वाक्य होता है और उसके आश्रित एक या अनेक उपवाक्य होते हैं। जैसे- यस्यास्ति वित्तं स नर: कुलीन:।
    1. यस्यार्था: तस्य मित्रणि।
    2. जिसके पास धन होता है, उसके सभी मित्र होते हैं।
    3. जिसके पास विद्या है, उसका सर्वत्र आदर होता है।
3. **संयुक्त वाक्य:** इसमें एक एक अधिक प्रधान उपवाक्य होते हैं। इनके साथ आश्रित उपवाक्य एक या अनेक होते हैं अथवा नहीं भी होते हैं। जैसे-
    1. जब में गुरु की कुटी पर पहुँचा तो वे स्नान करने नदी पर गए थे।
    2. यदाहं गुरुगृहं प्रापम्, तदा स स्ननार्थ नदीं गत आसीत्।

अर्थमूलक भेद

अर्थ या भाव (Mood) की दृष्टि से वाक्य के प्रमुख 7 भेद किए जाते हैं-

1. विधि-वाक्य कृष्ण काम करता है।
2. निषेध-वाक्य कृष्ण काम नहीं करता है।
3. प्रश्न-वाक्य क्या कृष्ण काम करता है?
4. अनुज्ञा-वाक्य तुम करो।
5. सन्देह-वाक्य कृष्ण काम करता होगा।
6. इच्छार्थक-वाक्य ईश्वर, तुम्हें सद्बुद्धि दे।
7. संकेतार्थ-वाक्य यदि कृष्ण पढता तो अवश्य उत्त्रीण होता।
8. विस्मयार्थक-वाक्य अरे तुम उत्त्रीण हो गए!

सुर आदि के आधार पर अन्य भेद भी किए जा सकते हैं।

क्रिया-मूलक भेद

वाक्य में क्रिया के आधार पर दो भेद होते हैं-

1. **क्रियायुक्त वाक्य**: सामान्यतया सभी भाषाओं में एक वाक्य में एक क्रिया होती है। वह विधेय के रूप में होती है। अधिकांश वाक्य इसी कोटि में आते हैं। जैसे- स: पुस्तकं पठति (वह पुस्तक पढता है)। वाच्य (Voice) के आधार पर क्रियायुक्त वाक्य तीन प्रकार के होते हैं-
    1. कतर्ृवाच्य में कर्ता मुख्य होता है। कर्ता में प्रथमा होती है। जैसे- राम: पुस्तकं पठति (राम पुस्तक पढता है)।
    2. कर्मवाच्य में कर्म मुख्य होता है, अत: कर्म में प्रथमा होती है और कर्ता में तृतीया। जैसे- मया पुस्तकं पठ्यते (मेरे द्वारा पुस्तक पढी जाती है)।
    3. भाववाच्य में क्रिया मुख्य होती है। कर्म नहीं होता। कर्ता में तृतीया होती है और क्रिया में सदा प्रथम पुरुष एकवचन होता है। जैसे- मया हस्यते (मेरे द्वारा हँसा जाता है), मया हसितम् (मैं हँसा)।
2. **क्रियाहीन वाक्य:** प्रचलन के आधार पर कई भाषाओं में क्रियाहीन वाक्यों का भी प्रयोग होता है। वहाँ क्रियापद गुप्त रहता है।
    1. **प्रचलन-मूलक:** प्रचलन के आधार पर संस्कृत, रूसी, बंगला आदि में सहायक क्रिया के बिना भी वाक्यों का प्रयोग होता है। क्रिया अन्तर्निहित मानी जाती है। हिन्दी, अंग्रेजी में सामान्यता सहायक क्रिया का होना अनिवार्य है। जैसे- संस्कृत- इदम् मम गृहम् (यह मेरा घर है) रूसी- एता मोय दोम (यह मेरा घर है) बंगला- एइ आमार बाड़ी (यह मेरा घर है)
    2. **प्रश्न-वाक्य:** प्रश्न-वाक्यों में प्रश्न और उत्तर दोनों स्थलों पर या केवल उत्तर-वाक्य में क्रिया नहीं होती। जैसे- प्रश्न - कस्मात् त्वमृ (कहाँ से?)। उत्तर- प्रयागात् (प्रयाग से)। यहाँ पर पूरा प्रश्न वाक्य होगा- तुम कहाँ से आ रहे हो? उत्तर- मैं प्रयाग से आ रहा हूँ। प्रयत्नलाघव के कारण क्रियाहीन वाक्य का प्रयोग होता है।
    3. मुहावारों में: लोकोक्तियों या मुहावारों में क्रियाहीन वाक्यों का प्रयोग होता है। जैसे, यथा राजा तथा प्रजा (जैसा राजा वैसी प्रजा); गुणा: पूजास्थानम् (गुण पूजा के स्थान हैं); प्रज्ञाहीन:अन्ध एव

(बुद्धिहीन अन्धा है); घर का जोगी जोगना आन गावँ का सिद्ध, आम का आम गुठली के दाम; सत्यं शिवं सुन्दरम्; जैसे नागनाथ वैसे साँपनाथ।

4. विज्ञापनों, समाचार-पत्रादि के शीर्षकों में: 'बुढे से जवान', 'नक्कालों से सावधान', 'देश में दुर्भिक्ष', 'युवती पर हमला', 'हिन्दुओ सावधान', 'इस्लाम खतरे में' आदि।
5. आतंक, भय, विस्मय आदि के सूचक पदों में- आग!, चोर चोर!, हाय दुर्भाग्य!, बाढ़-बाढ़, भूकम्प!

शैली-मूलक भेद

शैली के आधार पर वाक्यों के तीन भेद किए जो हैं-

1. **शिथिल वाक्य:** इसमें अलंकृत या मुहावरोदार वाक्य की ओर ध्यान नहीं दिया जाता है। वक्ता या लेखक मनमाने ढंग से बात कहता है। जैसे- 'एक थी रानी कुन्ती, उसके पाँच पुत्तर, एक का नाम युधिष्ठिर, एक का नाम भीम, एक का नाम कुछ और, एक का नाम कुछ और, एक का नाम भूल गया'। यह कथावाचकों आदि की शैली होती है।
2. **समीकृत वाक्य:** इसमें संतुलन और संगति का ध्यान रखा जाता है। जैसे, यस्यार्था: तस्य मित्रणि (जिसके पास पैसा, उसी के मित्र), यतो धर्मस्ततो जय:, इतो भ्रष्टस्ततो भ्रष्ट: यथा राजा तथा प्रजा, जिसकी लाठी उसकी भैंस, न घर का न घाट का। समीकृत वाक्य विरोधमूलक भी होते हैं। जैसे- कहाँ हंस कहाँ बगुला, कहाँ राजा कहाँ रंक, कहाँ शेर कहाँ सूअर। समीकृत वाक्य सन्तुलन आदि गुणों के कारण लोकोक्ति के रूप में प्रचलित हो जाते हैं।
3. **आवर्तक वाक्य:** इसमें क्रिया कथनीय वस्तु में दी जाती है। श्रोता की जिज्ञासा अन्तिम वाक्य सुनने पर ही पूर्ण होती है। यदि, अगर आदि लगाकर वाक्यों को लंबा किया जाता है। जैसे- 'यदि सुख चाहिए, यदि शान्ति चाहिए, यदि कीर्ति चाहिए, यदि अमरता चाहिए तो विद्याध्ययन में मन लगाओ।'

वाक्य में परिवर्तन की दिशाएँ

विकास-क्रम के अनुसार विश्व की प्रत्येक भाषा में परिवर्तन होते हैं। भाषा में परिवर्तन के कारण वाक्यों के गठन और प्रयोग में भी परिवर्तन होता है। यदि संस्कृत और हिन्दी की तुलना करें तो ज्ञात होगा कि संस्कृत में पद-क्रम

में परिवर्तन किया जा सकता है- पुस्तकं पठ- पठ पुक्तकम्, गोविन्दं भज-भज गोविन्दम्, परन्तु हिन्दी में कांव्य-प्रयोगों आदि को छोड़कर सामान्यतया पद-क्रम में परिवर्तन नहीं किया जा सकता है। पद-क्रम निश्चित है- कर्ता, कर्म, क्रिया। राम गाँव जाता है, के स्थान पर- गाँव राम जाता है, नहीं कह सकते। संस्कृत के तिङन्त धातुरूपों में तीनों लिंगों में क्रिया एक ही रहती है- बालक: पतति (गिरता है), बालिका पतति, पत्रां पतति, परन्तु हिन्दी में लिंग-भेद से क्रिया में भेद होता है- बालक पढ़ता है, बालिका पढ़ती है। वाक्य में परिवर्तन की मुख्य दिशाएँ ये हैं:-

पदोंम में परिवर्तन

हिन्दी में नवीनता के लिए पदक्रम में कुछ नये परिवर्तन दृष्टिगोचर होते हैं। पहले 'मात्रा' का प्रयोग संबद्ध शब्द के बाद होता था; अब पहले होने लगा है। जैसे- मानवमात्रा, प्राणिमात्रा, एक रुपयामात्रा के स्थान पर मात्रा मानव, मात्रा प्राणी, मात्रा एक रुपये के लिए, आदि। विशेषण का प्रयोग विशेष्य से पूर्व होता है, परन्तु नवीनता के लिए विशेष्य के बाद भी विशेषण का प्रयोग होता है। काला आदमी, प्राकृतिक दृश्य, उस महात्मा की जीवन लीला, सूअर का बच्चा, निर्धानता का अभिशाप के स्थान पर आदमी काला, दुश्य प्राकृतिक, जीवनलीला उस महात्मा की, बच्चा सूअर का, जैसे प्रयोग प्रचलित हो गए हैं।

अन्वय में परिवर्तन

संस्कृत में विशेष्य-विशेषण में लिंग और वचन की अन्विति अनिवार्य है- शोभन: बालक:, शोभनौ बालकौ, शोभना बालिका, शोभनं पुष्पम्, विद्वान् शिष्य:, विदुषी शिष्या। हिन्दी में प्रारम्भ में इसी आधार पर पूज्य पिताजी, पूज्या माताजी, सुन्दर बालक, सुन्दरी कन्या आदि प्रयोग प्रचिलत थे, परन्तु अब इस भेद को हटाकर केवल पुँलिंग विशेषण का ही प्रयोग किया जाता है। पूज्य पिताजी, पूज्य माताजी, सुन्दर कन्या आदि।

अधिक पद-प्रयोग

अज्ञान आदि के कारण वाक्य में कुछ अधिक पदों का प्रयोग किया जाता है। जैसे- 'फजूल' (व्यर्थ) के स्थान 'बेफूजल'; 'दरअसल' (वस्तुत:) के स्थान पर 'दरअसल में'; घर जाता हूँ- घर को जाता हूँ, मुझे-मेरो को, वह दुर्जन व्यक्ति, श्रेष्ठ-श्रेष्ठतम, सौन्दर्य-सौन्दर्यता। 126 भाषा-विज्ञान

पद या प्रत्यय का लोप:

संक्षेप या प्रयत्नलाघव के लिए कहीं-कहीं पर पद या प्रत्यय का लोप कर दिया जाता है। जैसे- अहं गच्छामि के स्थान पर 'गच्छामि'; त्वं पठ, त्वं लिख, पठ, लिख। 'त्वं कुत: आगच्छसि' को कुत:?। 'मैं नहीं पढता हूँ'को 'मैं नहीं पढता'। 'वह बीमार उठ नहीं सकता है और न बैठ सकता है' को 'वह बीमार उठ-बैठ नहीं सकता'।

कोष्ठ और डैश का प्रयोग

अर्थ की स्पष्टता के लिए कहीं-कहीं पर कोष्ठ ( ) और डैश (-) का प्रयोग किया जाता है। जैसे- (i) राम (परशुराम) ने क्षत्रिय वंश का नाश किया। (ii) राम-जमदग्नि पुत्रा, परशुराम-का क्रोध असहय था।

आदरार्थ बहुवचन

आदर या महत्त्व दिखाने के लिए एक के लिए भी बहुवचन का प्रयोग होता है। जैसे- गुरु: पूज्य:' । 'अत्राभवान्' (पूज्य) का अत्रावन्त:। 'राम वन गया' को -राम वन गए'। इसी प्रकार 'आपके शुभदर्शन हुए', 'आप कब पधारे', 'हमारा (मेरा) अनुरोध है'।

प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष कथन

अंग्रेजी के वाक्यगठन के प्रभाव के कारण हिन्दी में भी तदनुरूप वाक्यों का प्रयोग होने लगा है। 'शीला ने कहा कि मैं कल नहीं आऊंगी' के स्थान पर 'शीला ने कहा कि वह कल नहीं आएगी'।

कारक के लिए अर्धविराम -

अंग्रजी के अनुसरण पर हिन्दी में भी संक्षेप के लिए कारक-चिन्हों के स्थान पर अर्ध-विराम (कॉमा) का प्रयोग होता है। जैसे- 'प्रयाग विश्वविद्यालय के कुलपति' के स्थान पर 'कुलपति, प्रयाग विश्वविद्यालय'। इसी प्रकार 'अध्यक्ष, लोकसभा' प्रधानमंत्री, भारत सरकार' आदि

वाक्य परिवर्तन के कारण

ध्वनि, रूप और अर्थ के समान वाक्य-रचना में भी परिवर्तन होना स्वाभाविक है। वाक्यरचना में परिवर्तन के कारण लगभग वही हैं जो भाषा-परितर्वन के विषय में बताए गए हैं। सभी विद्वानों ने लगभग एक जैसे कारण माने हैं। यहाँ कुछ प्रमुख कारणों का उल्लेख किया जा रहा है।

अन्य भाषाओं का प्रभाव

विश्व की विविध भाषाओं के परस्पर सम्पर्क के कारण भाषाओं के वाक्य-गठन पर प्रभाव पड़ता है। भारत में भवनों की भाषा अरबी, फारसी और अंग्रेजी की भाषा अंग्रेजी का प्रभाव हिन्दी भाषा पर पड़ा। वाक्यों में 'कि' और 'चूँकि' का प्रयोग फारसी का प्रभाव है। हिन्दी के प्रारम्भिक साहित्य में 'कि' वाले प्रयोग नहीं मिलते हैं। संस्कृत में 'कि' के लिए 'यत्' निपात है। प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष कथन वाले वाक्यों में अंग्रेजी का प्रभाव पड़ा है। 'सीता ने कहा कि मैं भी वन जाऊँगी' के स्थान पर 'सीता ने कहा कि वह भी वन जाएगी'। अंग्रेजी के प्रभाव के कारण हिन्दी में भी बड़े-बड़े वाक्यों की रचना होने लगी है। संस्कृत में विशेषण-बहुल लम्बे वाक्य दूसरे ढंग के हैं। अंग्रेजी के प्रभाव के कारण क्रिया के बाद कर्म का प्रयोग भी कुछ चलने लगा है- 'वह पुस्तक पढ़ता है' के स्थान पर 'वह पढ़ता है पुस्तक'। इसी

प्रकार के वाक्य हैं- मैं पीता हूं चाय, मैं लाया हूँ गुड़िया, मैं खाता हूँ मक्खन, आदि। संस्कृत में किसी अन्य के कथन को 'इति' बाद में लगाकर कहा जाता है। इसके लिए अब हिन्दी में ''इन्वर्टेड कामा का प्रयोग अंग्रेजी के देन है।

विभक्तियों का घिस जाना

संस्कृत, लैटिन, ग्रीक आदि प्राचीन भाषाएँ संयोगात्मक (Synthetical) थीं। विकासक्रम के अनुसार वे वियोगात्मक (Analytical) हो गईं। इसके परिणामस्वरूप वाक्य-रचना में अन्तर आ गया। विभक्तियों, प्रत्ययों का कार्य परसर्गों, सहायक क्रिया आदि से लिया जाने लगा। संयोगात्मक अवस्था में पदक्रम में परिवर्तन हो सकता था। कर्ता, कर्म, क्रिया को आगे-पीछे रख सकते थे, परन्तु वियोगात्मक अवस्था में पदक्रम निश्चित हो जाता है, जैसा कि हिन्दी, अंग्रेजी आदि में विद्यमान है। इसमें कर्ता और कर्म का स्थान बदलने पर अर्थ का अनर्थ हो जाता है। हिन्दी में ने (तृ. एक. एन), पर (उपरि) आदि घिसे हुए कारक-चिन्ह हैं।

बलाघात

बलाघात के कारण वाक्य-गठन में परिवर्तन हो जाता है। 'मैं पराजय जैसी चीज नहीं जानता', के स्थान पर 'पराजय, मैं नहीं जानता'।

स्पष्टता

स्पष्टता के लिए वाक्य-गठन में परिवर्तन होता है। इसके लिए कोष्ठ या डैश का प्रयोग होता है। 'अमरत्व (मोक्ष की कामना) मानव-जीवन का लक्ष्य है'।

मानसिक स्थिति

भाषा में वाक्यों की रचना पर वक्ता की मानसिक स्थिति का भी पर्याप्त प्रभाव पड़ता है। यदि किसी बाह्य अथवा आन्तरिक कारण से वक्ता क्षुब्ध है, घबराया हुआ है, तो उसकी भाषा में वाक्य छोटे-छोटे, पदक्रम अव्यवस्थित रहता है। यही कारण है कि युद्धकालीन भाषा तथा शान्तिकालीन भाषा में बड़ा अन्तर रहता है। शान्ति-काल में भाषा में प्रयुक्त वाक्यों में व्यवस्था अधिक रहती है।

प्रयत्न-लाघव

प्रयत्न-लाघव के लिए तो सभी जगह अवकाश रहता है। अत: भाषा के अन्य अंगों की ही भाँति वाक्य-परिवर्तन में भी यह कारणरूप में रहता है। वाक्यों में कुछ प्रत्ययों तथा पदों का लोप इसी का परिणाम है। जैसे "आँखों से देखी बात सच होती है।" के स्थान पर "आँखों देखी बात सच होती है" आदि।

अनुकरण की प्रवृत्ति

अनेक वक्ताओं में कुछ विशेष कारणों से विशेषत: उच्चता की भावना के कारण किसी भाषा के अनुकरण की प्रवृत्ति उत्पé हो जाती है। ऐसे वक्ता उस तथाकथित उच्च भाषा का अनुकरण जानबूझकर करने लगते हैं, जिससे उनकी अपनी भाषा के वाक्यों में परिवर्तन हो जाता है; जैसे- "मैं जा रहा हूँ।"- मोहन ने कहा। "तुम नहीं जा सकते।"- सोहन ने उसे रोका। यह अंग्रेजी की वाक्य-रचना का अनुकरण है। अन्य भाषा का प्रभाव जहाँ वाक्य-रचना को अनजाने में प्रभावित करता है, वहाँ अनुकरण से जानबूझकर अपनी भाषा को दूसरी भाषा के आधार पर बदलने का प्रयास किया जाता है।

नवीनता का प्रयास

अनेक वक्ता तथा लेखक अपनी भाषा में नवीनता लाने के लिए वाक्यों के नये-नये प्रयोग करते हैं। इस प्रयास में वाक्य में प्रचलित पदक्रम को बदल दिया जाता है: जैसे- "यह स्थान मनुष्य मात्रा के लिए है।" के स्थान पर "यह

स्थन मात्रा मनुष्यों के लिए है।" इसके अतिरिक्त अनेक बार कर्ताविहीन या क्रियाविहीन वाक्यों का प्रयोग भी देखा जाता है।

अज्ञान

अज्ञान के कारण भी वाक्यों में अधिक पदों का प्रयोग होने से, वाक्य-परिवर्तन हो जाता है। अनेक वक्ता 'दरअसल', 'दरहकीकत', 'सज्जन' आदि शब्दों के स्थान पर वाकयों में 'दरअसल में' 'दरहकीकत में', 'सज्जन पुरुष' आदि का प्रयोग करते हैं, जिससे वाक्य-रचना में परिवर्तन हो जाता है।

परम्परावादिता

कभी-कभी परम्परावादिता से भी वाक्यों में परिवर्तन हो जाता है। संस्कृत के विशेषण-विशेष्य का अन्वय आवश्यक था, और विशेषण भी पुल्लिंग, स्त्रीलिंग तथा नपुंसकलिंग होता था। हिन्दी में, इस परम्परा का पालन कुछ विशेषणों में तो हो रहा है, किन्तु कुछ में हिन्दी की प्रकृति के अनुसर विशेषण का एक ही लिग् रह गया है। जैसे, 'चतुर: बालक: या 'चतुरा बालिका'। संस्कृत के प्रति आग्रह रखने वाले कुछ विद्वान हिन्दी में भी 'चतुरा बालिका' जैसा प्रयोग करते हैं, जिससे हिन्दी-वाक्यों में परिवर्तन हो जाता है।

संस्कृत में आदर प्रकट करने के लिए एकवचन के स्थान पर बहुवचन का प्रयोग होता होता था। परम्परा-पालन के लिए हिन्दी में भी ऐसे प्रयोग चल रहे हैं, जिससे हिन्दी की वाक्य-रचना में परिवर्तन हो जाता है; क्योंकि हिन्दी में एकवचन के लिए बहुवचन के प्रयोग का कोई नियम नहीं है। "वह आया" के स्थान पर "वे आये" उदाहरण ऐसा ही है। आदर के लिए, आजकल बोलचाल की हिन्दी में "आप आये" या "आप गये" जैसे कुछ वाक्यों का प्रयोग पुँल्लिंग तथा स्त्रीलिंग् दोनों के लिए समान रूप से हो रहा है। वाक्यपरिवर्तन की दृष्टि से ऐसे प्रयोगों का बहुत ही महत्त्व है।

उपर्युक्त कारणों के अतिरिक्त भावुकता, 'संक्षेप की प्रवृत्ति' आदि अन्य कारण भी हैं, जिनमें वाक्य-परिवर्तन घटित होता है।

पदिम

पदिम शब्द ब्लूमफील्ड द्वार प्रयुक्त Taxeme शब्द का हिन्दी अनुवाद है। पदिम शब्द का विवरण डा. कपिलदेव द्विवेदी ने इस प्रकार किया है। पदिम क्या है? - वाक्य के लघुतम अवयव को 'पदिम' कहते हैं। वाक्य का लघुतम अवयव 'पद' होता है। वाक्य के अंग के रूप में 'पद' का अध्ययन 'पदिम' है। वाक्य में पद किस प्रकार कार्य करते हैं; वे किन आर्थों की अभिव्यक्ति करते हैं; उनके स्थान-परिवर्तन से क्या अर्थभेद होता है? - आदि का विवेचन 'पदिम' का विषय है। पदिम का अवयव को 'संपद' ; (Allotax) कहते हैं।

रचना के आधार पर वाक्य के तीन भेद किए गए है- सामान्य वाक्य, मिश्र वाक्य और संयुक्त वाक्य। ज़ंगमउम (पदिम) में इन तीनों प्रकार के वाक्यों का चार प्रकार से अध्ययन किया जाता है-

1. **पदक्रम** . पदों को किस क्रम से रखना चाहिए तथा सम्बन्धतत्त्व का क्या क्रम होगा। इसका इसमें विचार होता है।
2. **स्वर-परिवर्तन** . वाक्यों में संगीतात्मक और बलात्मक स्वराघातों का प्रभाव तथा उनसे होने वाले अर्थभेद का अध्ययन पदिम का विषय है।
3. **ध्वनि-परिवर्तन** . वाक्यों में होने वाले ध्वनि-परिवर्तनों का अध्ययन। ये परिवर्तन संधि, समास आदि के द्वारा होते हैं। जैसे- महान् + आत्मा = महात्मा, राजन् + सखा = राजसखः, मध्य + अहन् = मध्याह् न, Roy > Regal > Regular।
4. **चयन** . वाक्य में उपर्युक्त शब्दों का चयन कर प्रयोग करना, संज्ञा, क्रिया, विशेषण आदि में अत्यन्त उपयुक्त शब्दों को छाँटना और उनका प्रयोग करना।

Syntax में ही इन सभी बातों का विवेचन एवं विश्लेषण किया जाता है, अत: Taxeme (पदिम,) के अलग विवेचन की आवश्यकता नहीं मानी जाती है।